जीवन-मुक्त

डॉ.जगदीश गुप्त

(सन 1950 में निराला जी के प्रति लिखी गयी मेरी कविता)

अमर हिंदी के हिमालय वंदनीय विशाल|
पर्व-पावन-प्राण, ज्योतित गर्व-उन्नत भाल||
दीर्घ नासा, अधर पतले, सबल वृषभस्कंध|
युग-पुरुष, युग-बाहु लम्बित,युग चरण निर्बंध||
वसन गैरिक, सांध्य-घन के आवरण में सूर्य|
धूलि-धूसर देह श्लथ,अंतर प्रभा से पूर्ण ||
दृष्टि तीखी,ज्यों समय पर कर रही हो व्यंग|
गीत के स्वर, ताल,लय,पर थहर उठते अंग||
स्वगत-मुखरित मौन, गुरु, गम्भीर,धीर,प्रशान|
पी गये युग का गरल शंकर सदृश निर्भ्रांत||
हो चुकी,अब हो चुकीं सब यातनाएँ मुक्त|
रम्य सुरसरि-तीर, तन-मन-मुक्त, जीवन-मुक्त||

लगभग चार दशक बीत गये परंतु जब भी स्वयं इस कविता को पढ़ता हूँ तो निराला जी का सजीव चित्र उनकी सारी भाव-भंगिमाओं के साथ सामने आ जाता है| एक-एक शब्द अपनी सार्थकता प्रमाणित करता है| इतने बड़े व्यक्तित्व को इतने कम शब्द-सीमा में बाँधना कैसे संभव हुआ यह मैं स्वयं नहीं जानत| हाँ मैंने जो तैलचित्र बनाया वह अवश्य अनजाने ही इस कविता को संम्पूरित करता है|मेरे अध्ययन-कक्ष में, सर्वोपरि स्थान पर उसे जो देखता है, उदात्त भावना से भर जाता है| जिस छायाचित्र के आधार पर मैंने उसे बनाया वह काफी पीछे छूट गया| उदास आँखों को मैंने अपनी धारणा के अनुरूप अंतदृष्टि-सम्पन्न चित्रित किया जिसका अनुभव मुझे उनकी 'राम की शक्ति पूजा', 'सरोज-स्मृति' तथा 'तुलसीदास' में निरंतर होता रहा | उनकी सूर्यकांत छवि मैंने पीले रंग से आँकी और लगा कि यही ठीक था| गैरिक वसन चित्र में तो अंकित नहीं है पर कविता उसे कैसे भूलती| विवेकानंद का रूप उनके मन में था ही, उनके जीवन में भी प्रतिबिम्बित हुआ| 'स्वगत-मुखरित मौन' को वही जान सकता है जो वर्षों उनके सम्पर्क में रहा हो| मैंने एक बार उनके स्वगत को लिपिबद्ध करने की चेष्टा की तो लगा कि वे बहुधा गहरे अर्थों की व्यंजना करते हैं| इस सम्बंध में मेरा लेख द्रष्टव्य है | अंतिम क्षणों में उनकी दृष्टि और सदा के लिये स्थिर होती हुई पुतलियों का साक्षी में रहा जैसे रामकृष्ण जी थे|

कलाकार बंधु कमलाशंकर का आवास ही निराला जी का अंतिम आवास बना| उनके परिवार के स्नेह ने उन्हें ऐसा बाँधा कि सन्यासी होकर भी वह गृहस्थ बने रहे|कांतिचंद्र सोनरिक्सा जी ने अभी कुछ ही दिन पहले संस्मरण को पुनः सजीव बना दिया जब अपनी दृष्टि से अंतिम क्षणों की स्मृति को सुनाया | वे भी उस अविस्मरणीय अनुभव के साक्षी थे जिसने निराला जी की अंतिम सासों का स्वर सुना| मुझे अनूप शर्मा की यह पंक्तियाँ कभी नहीं भूलतीं जो उन्होंने एक भिन्न संदर्भ में सुनायी थीं–

'एक बार घूमे, घूम कर पथरा गये' निराला जी की शव-यात्रा सचमुच जन-यात्रा थी | छोटे से बड़े तक ऐसे लोग उसमें शामिल हुए जो शायद ही कभी इस रूप में प्रेरित हुए हों | लगता था पूरा दारागंज उनके साथ चल पड़ा हो | साहित्यकारों, कलाकारों, संगीतज्ञों तक ही नहीं, पण्डों, मल्लाहों और दुकानदारों की भावना उनके लिए निकले आँसुओं में बह चली|निराला जी की प्रतिमा के पार्श्व में चारों ओर

अंकित पंक्तियाँ सभी को स्मरण दिलाती रहेंगी कि एक सच्चा जन-कवि हुआ था जिसने हिंदी कविता की धारा ही बदल दी|

दुख ही जीवन की कथा रही |
क्या कहूँ आज जो नहीं कही ||
क्षीण का न छीना कभी अन्न |
मैं लख न सका वे दृग-विपन्न||

यह निराला जी ही थे जो मृत्यु से पंजा लड़ाने की कल्पना कर सके|

मृत्यु लड़ायेगी तुझसे जब पंजा|

श्यामा का नृत्य उनकी 'देवी-भक्ति' को सदा प्रेरणा देता रहा | वसंत पंचमी उनका जन्म दिन इसलिए माना गया कि निराला अपने को सरस्वती-पुत्र के रूप में ही मानते थे और चाहते थे कि सब लोग इसे मान लें | हुआ भी ऐसा ही | महादेवी जी के लिए होली और निराला जी के लिए वसंत यह दोनों दिन उनकी अपनी कल्पना की सृष्टि थे जो यथार्थ बन गये|

जब निराला जी की स्मृति में डाक विभाग ने एक टिकट निकाला तो महादेवी के हस्ताक्षर सहित वह मुझे प्राप्त हुआ| साहित्यकार संसद से लेकर लीडर प्रेस, इंडियन प्रेस तक कितने संदर्भ हैं जो भूलते नहीं | इलाचंद्र जोशी के साथ कटरा-कर्नलगंज में निराला जी का रहना और शब्दों की बहस से रोटियाँ चला देना कभी भूल नहीं सकता | 'साहित्यकार' का सम्पादन महादेवी और जोशी जी दोनों ने किया था| 'परिमल' नाम हम लोगों ने निराला जी की रचना से प्रेरित होकर ही रक्खा, बाद में मानव जी ने 'गुंजन' नाम से अलग संसथा बना ली पर कहाँ 'परिमल' कहाँ 'गुंजन'| पंत जी और निराला जी के बीच बंसी और माधो गुरु की छवियाँ उभरीं और 'लोकायतन' में समा गयीं | आज वे घटनाएँ इतिहास का अंग बन गयीं हैं |